असिंचित गेंहू की भरपूर पैदावार लें

खेत की तैयारी – असिंचित दशा में गेंहू की खेती लगभग हर गेंहू उगाने वाले राज्य में की जाती है, लेकिन गेंहू के खेत की तैयारी प्रचलित पद्धतियां हर एक राज्य में भूमि की सतह, मिट्टी की किस्म तथा जलवायु के अनुसार भिन्न-भिन्न है। छत्तीसगढ़ में ज्यादातर गेंहू असिंचित दशा में उगाया जाता है। खेत की तैयारी तीन विधियों से की जाती है।

नमी की सुरक्षा – असिंचित गेंहू की खेती के लिए मानसूनी वर्षा का पूरा-पूरा उपयोग करना जरूरी है। यदि संभव हो तो मानसून आने से पहले या बाद में 75 सेमी लगभग गहरी जुताई कर दें। इसके बाद खेत के चारों तरफ ऊंची मेड़ें बांध दें ताकि वर्षा का पानी खेत में रूका रह सके। इससे वर्षा का पानी भूमि में अच्छी तरह प्रवेश कर जाता है। इस तरह भूमि में काफी जीवांश मिल जाता है, जीवाणुओं (गहरी जुताई से भूमि में पत्तियां, जड़े तथा हरे पौधों में डंठल भूमि के अंदर चले जाते हैं) का कार्य बढ़ जाता है तथा भूमि में नमी को बचाकर रखने की क्षमता भी बढ़ जाती है।

जातियां – असिंचित एवं अर्धसिंचित अवस्था हेतु पिसी किस्म के गेहूं की श्रेणी में प्रचलित सी-306 सुजाता, नर्मदा-4, नर्मदा-112 प्रचलित हैं। कठित गेहूं के लिए ए 9-30-1 और मेघदूत प्रचलित हैं। इसे अतिरिक्त कुछ नई किस्मों का विकास हुआ है। जिसमें जेडब्ल्यू-17 और जेडब्ल्यू-3173, एचडब्ल्यू-2004 है। नवीनतम पिसी किस्म एचआई-1500, एमपी-3020 और कठिया किस्म एचडी-4672 (अमर) व एचआई-8627 को भी बोने की सिफारिश की गई है। राजस्थान के लिए असिंचित दशा में ए-9-30-1, डी-134 (दक्षिण राजस्थान), खरचिया 65 (पश्चिम राजस्थान की ऊसर भूमि), आरएस 31-1 (पश्चिम राजस्थान), सी-306, मुक्ता, जेयू-12, सुजाता (दक्षिण-पूर्वी राजस्थान), सी-306, आईडब्ल्यूपी- 331, व पीबी डब्ल्यू-65 (पूर्वी राजस्थान) को बोने की सिफारिश की गई है।

बुआई का समय – असिंचित खेती में बुआई के समय का ध्यान रखना जरूरी हैं। बुआई देर से करने पर नमी कम हो जाने का डर रहत। है तथा बीज कम जमता है। बुआई 20 से 25 अक्टूबर तक कर देनी चाहिए, क्योंकि उस समय भूमि में नमी अच्छी होती है।

बीज की मात्रा और बुआई की तरीका – बीज की मात्रा, बीज का आकार के अनुसार 100 से 125 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के लिए काफी होता है। बीज को 4-5 सेमी की गहराई में बोयें और कतार से कतार की दूरी 25 सेमी रखें। कतार से कतार की दूरी ज्यादा होने पर पौधों में पानी के लिए प्रतिस्पर्धा कम हो जाती है तथा बढ़ने के लिए सभी को उचित मात्रा में नमी मिलती रहती है। बुआई करने से पहले जड़ और पद गलत आदि बीमारियों को रोकने के लिए थायरम नाकर फफूंदनाशक दवा से बीजोपचार कर बीज बोना चाहिए। 100 किलोग्राम बीज

के लिए 200 ग्राम थायरम उपयोग करना चाहिए।

उर्वरक प्रयोग – सस्य परीक्षणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकला है कि असिंचित दशा में गेंहूं के लिए बुआई करते समय 87 किलो यूरिया और 175 किलो सिंगल सुपर फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में सीडड्रिल या देशी हल द्वारा कूंड़ों में 10 सेमी गहरा डालें। असिंचित खेती में गेहूं की खेती के लिए कम से कम तीन साल में एक बार कम्पोस्ट या गोबर खाद 50-60 गाड़ी प्रति हेक्टेयर बुआई के 10 से 15 दिन पहले खेत में डालकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। खाद अच्छी प्रकार सड़ी हुई होनी चाहिए। इससे भूमि के कणों की संरचना सुधर जाती है, जीवाणुओं का कार्य अच्छी तरह होता है तथा खेत में नमी रोक रखने की शक्ति भी बढ़ जाती है। 3 प्रतिशत का घोल बनाकर पत्तियों पर छिड़का जाए तो उससे गेहूं की पैदावार काफी बढ़ जाती है। यूरिया का पत्तियों पर छिड़काव बुआई के 45-50 दिन बाद शुरू करना चाहिए। (3 किलो यूरिया को 100 लीटर पानी में घोलने से 3 प्रतिशत यूरिया का घोल बन जाता है।) 600 से 700 लीटर यूरिया के घोल को प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो गया है कि पत्तियों पर छिड़की गई यूरिया का शोषण जल्दी हो जाता है और इसका उपयोग पौधे पूरी तरह कर लेते हैं। असिंचित दशा में नमी संरक्षण से गेहूं की उपज पर लाभकारी उर्वरकों का प्रभाव पड़ता है।

-डॉ विजय कुमार जैन

चने की बुआई शीघ्र करें

चना भारत वर्ष की एक मुख्य दलहनी फसल है। विश्व में इसका सबसे अधिक उत्पादन भारत में ही होता है। उत्पादन एवं क्षेत्र की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का देश में पहला स्थान है। भारत की कुल दलहन उत्पादन में 43.9 प्रतिशत हिस्सा अकेले चने का है।

खेती की तैयारी एवं भूमि उपचार :– चने की फसल के लिए ढेले वाले खेत की जरूरत होती है, ताकि फसल की जड़ी तक आसानी से वायु प्रवाह हो सके। इसके लिए खरीफ की फसल के बाद एक गहरी जुताई करने के बाद दो जुताई देशी हर से करें। अंतिम जुताई पाटा लगाकर करें।

दीमक व भूमि में रहने वाले अन्य कीड़ों की रोकथाम के लिए बुवाई से पूर्व अंतिम जुताई के समय क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत या एन्डोसल्फान 4 प्रतिशत को 25 किलो प्रति हेक्टेयर (5 किलो प्रति बीघा) की दर से खेत में बिखेरकर जुताई करनी चाहिए।

उन्नत किस्में – जवाहर 218, जे.जी. 221, एच-355, जेजी-74 इत्यादि है।

बुवाई का समय – असिंचित क्षेत्रों में बुवाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक कर देना चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में अक्टूबर के द्वितीय सप्ताह से नवंबर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में उखटा (विल्ट) का प्रकोप अधिक होता है। वहां गहरी व देरी से बुवाई करना लाभदायक रहता है।

बीज की मात्रा - 70-80 किलोग्राम/हेक्टेयर या 14-16 किग्रा./बीघा की दर से बीज बोना चाहिए तथा 3 ग्राम थाईरम 5 ग्राम राईजोबियम/किलो बीज तथा 600 ग्राम पी.एस.बी./हे. की दर से उपयोग करें।

उर्वरक – मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरक का प्रयोग करें। यदि मिट्टी का परीक्षण नहीं किया गया है तो नाइट्रोजन 20 कि.ग्रा./हेक्टेयर (4 किलो प्रति बीघा) की दर से बुवाई के समय दें। उर्वरक 12-15 सेमी की गहराई पर देना चाहिए।

सिंचाई – चने की खेती अधिकतर बारानी क्षेत्रों में की जाती है। परंतु जहां पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहां मिट्टी एवं वर्षा को ध्यान में रखते हुए पहली सिंचाई 40-45 दिन बाद फूल आने पर एवं दूसरी 60-65 दिन बाद फलियों के आने पर करें।

पत्तियों की तुड़ाई (निपिंग) – फसल बुआई के 30-45 दिन बाद पौधों की अग्र कलिका को तोड़ लेना चाहिए। ऐसा करने से पौधों में शाखाएं अधिक संख्या में निकलती है। जिससे पौधा मजबूत एवं प्रति हेक्टेयर उपज में वृद्धि होता है।

पाले से बचाव- पाले के प्रभाव के फसल को बचाने के लिए 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब मिलाकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करना चाहिए।

मिश्रित खेती – बारानी क्षेत्रों में अकेले चने की फसल लेने की अपेक्षा चना व सरसों या चना व कुसुम की मिलवा खेती करना लाभदायक है।

मिलवा खेती के अकेली फसल के मुकाबले फली छेदक कीट का प्रकोप भी कम होता है। चना व सरसों 4:1 (4 लाइनें चना एवं 1 लाइन सरसों की) या चना व कुसुम को 7:1 (7 लाइनें चना की व 1 लाइन सरसों की) के अनुपात में 30 सेमी. कतार से कतार की दूरी रखते हुए बुवाई करनी चाहिए।

-डॉ. आर पी एस यादव
-बृज भूषण पाठक

पशुओं का जानलेवा रोग तिल्ली ज्वर

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। भारतीय अर्थव्यवस्था भी कृषि पर ही आधारित है। 70 प्रतिशत ग्रामीण, पशुपाल क्षेत्र से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। श्रमिक कृषि में लगे हुए हैं जो या तो भूमिहीन हैं या लघु किसान हैं या लघु किसान हैं, जिसके पास औसतन 0.39 हेक्टेयर भूमि है ऐसे लोगों के लिए पशुपालन ही आय का मुख्य स्त्रोत है।

भारत में विश्व की कुल पशुधन संख्या का 23 प्रतिशत पाया जाता है। भारत का वार्षिक दुग्ध उत्पादन लगभग 90 मिलियन टन है जो कि विश्व में प्रथम स्थान पर है, फिर भी औसत उपलब्धि दूध की विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानक स्तर 270 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से काफी कम है।

भारत प्रति पशु उत्पादकता के मामले में विश्व में 100 वे स्थान पर है। इसका मुख्य कारण पशुओं में होने वाले रोग हैं, जिसकी रोकथाम अथवा बचाव जरूरी है। इन रोगों में एक महत्वपूर्ण जानलेवा रोग है तिल्ली ज्वर, जिसको गिल्टी रोग या एन्थ्रेक्स के नाम से जाना जाता है।

तिल्ली ज्वर एक तीव्र ज्वरीय रोग है जो स्तनधारी पशुओं में बेसीलस एन्थ्रेसिस नामक जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न होता है और इस रोग की प्रमुख पहचान वृहदाकार, काली नर्म तिल्ली और अधोत्वचीय रक्तस्त्राव, कान, मुंह आदि से तथा पेशाब की जगह से खून आने लगता है। इस रोग में पशु की अचानक मृत्यु हो जाती है। यह रोग मुख्यतः गोपशुओं, भेड़ तथा बकरियों में यह रोग कम होता है। रोगी पशुओं की खाल या बालों से इस रोग का संक्रमण मनुष्यों में भी हो जाता है।

इस रोग के प्रति पक्षी प्रतिरोधी होते हैं, युवा पशु रोग के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। पशुओं की खराब अवस्था, यात्रा में थकावट तथा खुरपका और मुंहपका रोग में तिल्ली ज्वर की संवेदनशीलता बढ़ जाती है। रोग का प्रकोप वर्षा और ग्रीष्म ऋतु में मक्खियों की कीटों की बहुसंख्या गर्मी और

अधिक नमी के कारण अधिक हो जाता है।

रोग का संचरण दूषित भोजन व पानी, दूषित मिट्टी, वनस्पतियों, काटने और रक्त चूसने वाल कीटों, मांसाहारी पक्षियों और पशुओं द्वारा होता है। गोपशुओं में इस रोग का संचरण श्वसन द्वारा भी हो सकता है। इस रोग के लक्षणों में मुख्यतः बहुत तेज बुखार आना, लगभग 105 से 106 डिग्री फरनहाइट, आंख व मुंह की झिल्ली पर लाली आ जाती है।

शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों पर सूजन आ जाती है, जिनमें जलन व दर्द होता है। मुंह, नाक गुदा तथा भगद्वार से झागयुक्त काला रक्त निकलता है। पशु का पेट फूल जाता है। पशु की प्रायः 10 स 36 घंटे में मृत्यु हो जाती है। इस रोग से मृत जानवरों का शव परीक्षण नहीं करना चाहिए, व न ही मृत जानवर की खाल उतारना चाहिए क्योंकि मृत जानवर को खोलते ही रक्त और अन्य स्त्रावों से फर्श दूषित हो जाता है और जीवाणु बाहय वातावरण के संपर्क में आते ही बीजाणु के रूप में परिवर्तित हो जाता है जो कि बहुत ही प्रतिरोध होते हैं तथा इससे अन्य पशुओं में बीमारी फैल सकती है। रोग से बचाव हेतु स्वस्थ पशुओं को बीमार पशुओं से अलग रखना चाहिए व मृत पशु के शव व बिछावन को जमीन में गाड़ देना चाहिए। रोग आ जाने पर पशु चिकित्सा सहायता हेतु पशु चिकित्सक से संपर्क करते हुए एंटीबायोटिक पेनिसलीन समूह एंटीहिस्टेमिनिक दवायं व एंटी एन्थ्रेक्स सीरम का उपयोग करना चाहिए।

-डॉ दुर्गेश मित्तल

धान फसल में कीट रोग एवं बचाव

धान की बुवाई अल्पवर्षा के कारण प्रभावित हुई है। धान में अनगिनत रोग/कीटों का आक्रमण होता है। समय से उनका नियंत्रण आवश्यक है, ताकि उत्पादन एवं विपरीत असर ना हो पाये।

झोंका या ब्लास्ट – पत्तियों पर भूरे नाव के आकार का धब्बा दिखाई देता है। जिसके बीच का भाग धूसर रंग का होता है। अनुकूल वातावरण मिलने पर कई क्षतस्थल आपस में मिलकर पत्तियों का अधिकांश भाग घेर लेते हैं, जिसके कारण पत्तियां झुलसकर सूख जाती हैं, पुष्पपुंज के निचले डंठल में धूसर बादामी रंग का क्षतस्थल बनता है।

रोकथाम – कोई भी ताम्रयुक्त फफूंदनाशी 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

यूरिया की मात्रा थोड़ी-थोड़ी करके कई बार नहीं देनी चाहिए इससे रोग बढ़ जाता है।

भूरा धब्बा - इस रोग में पत्तियों पर धब्बे दिखाई देते हैं जो कि आगे बढ़कर सभी पत्तियों में फैलकर पोषक तत्व के प्रभाव के अवरोध प्रदान कर उत्पादन में क्षति पहुंचाते हैं।

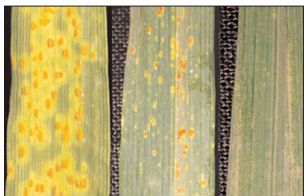

धब्बे छोटे बिंदु से लेकर गोलाकार या अंडाकार बनते हैं। छोटा धब्बा गाढ़ा भूरा या बैंगनी भूरा रंग का होता है। बड़े धब्बों के किनारे इसी रंग का होता है। इसके बीच का भाग पीलापन लिए गंदा सफेद या धूसर रंग का होता है।

रोकथाम – डायथेन एम 45 2 ग्राम दवा लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की संतुलित मात्रा देनी चाहिए। पोटाश देने से पौधों में रोग अवरोधी क्षमता बढ़ती है।

खैरा – पत्तियों पर ताम्बिया रंग के गीले हो जाता है। प्रकोपित फसल पशुओं के द्वारा चराई की घास जैसे दिखाई देती है।

फौजी कीट (आर्मीवर्म) – प्रकोप के लक्षण इस कीट की इल्लियां प्रारंभ में धान की पत्तियों तथा तनों को काटकर हानि पहुंचाती है। फसल में बाली आने पर उसे काटकर जमीन पर गिरा देती है। एक खेत के आक्रमण के बाद दूसरे खेत में आक्रमण करती है इसलिए इसे आर्मी वर्म (फौजी कीट) कहते हैं। इसकी इल्ली रात में आक्रमण करती है तथा दिन में पौधे के पास दरारों में छुपी रहती है।

नियंत्रण के उपाय – रसायानिक नियंत्रण समन्वित कीट प्रबंधन के अनुसार रासायनिक कीटनाशकों को प्रयोग आवश्यकतानुसार सुरक्षित एवं अंतिम उपाय के रूप में करें।

तना छेदक हेतु इंडोसल्फान 35 ई.सी. 650 मि.ली./हे. या क्विनालफॉस 750 मि.ली. इनमें से कोई भी एक दवा लेकर 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

रस चूसक हेतु जैसे-हिस्पा, गंधी बग, फुदके इनके लिए मिथाईल डेमेटान 25 ई.सी. 1000 मिली./हे. या फोरेट 10 किलो ग्राम/हे. या कार्बोफ्यूरॉन 20 किलो ग्राम/हे. दवा का भुरकाव करें।

उपचार – जिंक सल्फेट 5 किलो साथ में 2.5 कि. चूना का घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल से दो छिड़काव किया जाना चाहिए।

प्रमुख कीट

गंधी बग – इस कीट के प्रौढ़ तथा शिशु दोनों ही नुकसान पहुंचाते हैं। कीट पौधों में बाली निकलनी शुरू होते ही बालियों का रस चूसना प्रारंभ कर देते हैं, जिससे दाना खोखला हो जाता है तथा छिलके सफेद रंग के दिखाई देते है।

तना छोदक इल्ली तने में घुसकर मध्य भाग को खाती हुए शीर्ष भाग तक पहुंचकर नुकसान करती है, जिसके कारण शीर्ष भाग सूख जाता है जिसे डैड हार्ट जिसको खींचने से आसानी से निकल जाता है।

इस कीट के प्रकोप से पत्तियां भूरे रंग की होकर सूख जाती है।

गंगई मक्खी (गालमिंज)- प्रकोप के लक्षण - इल्ली (मेगट) पौधे के जड़ के पास छेद करके पौधे का भीतरी भाग खाती है इससे मुख्य भाग सूख जाता है तथा चांदी के रंग का